©2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 8 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

श्रीमदभगवद्गीता में राष्ट्रिय भावना का विवेचन

पूजा जायसवाल
शोधच्छात्रा
नेट/जे0आर0एफ0
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्रीमद्भगवद्गीता भारतीय वाङ्मय का एक देदीप्यमान रत्न हैं। हिन्दू धर्म ग्रन्थों में ही नहीं, विश्व के सम्पूर्ण आध्यात्मिक साहित्य में इसका स्थान बहुत ऊँचा है। यह ऐसा सर्वमान्य ग्रन्थ हैं जिसका स्वदेश और स्वधर्म में ही नहीं, विदेश और परमधर्मों में भी बहुत अधिक मान हैं। भगवान् श्रीकृष्ण की लोकलीला पर अनेक भाषाओं में विपुल वाङ्मय की रचनाएँ प्राप्त होती हैं। जहाँ एक ओर महाकवियों ने अनेक साहित्यिक महाकाव्य, भक्तों ने विपुल भक्ति साहित्य, धर्मानुयायियों ने व्यापक मानव धर्म ग्रन्थ लिखें, वहीं दूसरी ओर भारतीय चिन्तन के मनीषियों ने महनीय दार्शनिक चिन्तन के विशाल वाङ्मय की रचनाएँ की हैं। अद्वैत, द्वैत, द्वैताद्वैत, शुद्धाद्वैत, विशिष्टाद्वैत और अचिन्त्यभेदाभेद नामक विविध वादों को प्रस्तुत करके आचार्यों ने दार्शनिक सामग्री से भारत राष्ट्र और भारतीय संस्कृति की पूजा की है। प्रस्थानत्रयी के अन्तर्गत द्वितीय प्रस्थान के रूप में स्मृति प्रस्थान के नाम से प्रख्यात वेदान्त वाङ्मय में भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा उपदिष्ट गीताशास्त्र की महिमा जगद्विश्रुत है। श्रीमद्भगवद्गीता की संज्ञा से विभूषित इस महनीय ग्रन्थ को विश्व के सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य महाभारत में महर्षि व्यास ने ब्रह्मविद्या, योगशास्त्र, उपनिषद् तथा श्रीकृष्णार्जुन संवाद के नाम से अभिहित किया है; जो प्राचीन काल से लेकर आज तक मनुष्यमात्र के आचरण के लिए समसामयिक बना हुआ है। प्रस्थानत्रयी पर जिन आचार्यों के द्वारा प्रौढ़ भाष्यों की रचना की गयी हैं उनमें सर्वश्री श्रीमदाद्यजगद्गुरू श🕐राचार्य, भगवत्पाद रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, निम्बार्क और जगद्गुरू रामानन्दाचार्य तथा स्वामी श्री रामभद्राचार्य परम श्लाघ्य है।

योगेश्वर श्रीकृष्ण पर सम्प्राप्त विविध विधाओं में जो वाङ्मय है, विद्वानों और समीक्षकों ने अपनी संधारणाओं, कल्पनाओं तथा विचारणाओं के द्वारा उसे प्रस्तुत करके मनुष्यमात्र का कल्याण किया है। भगवान् श्रीकृष्ण के श्रीमुख से उपदिष्ट श्रीमद्भगवद्गीता का जो एक महनीय वाङ्मय प्राप्त होता है उसके अन्तर्गत योगेश्वर श्रीकृष्ण के द्वारा किये गये लोकहित चिन्तन का उल्लेख वर्तमान परिदृश्य में भारतवर्ष के साथ सम्पूर्ण विश्व के लिए नितान्त समसामयिक और परमोपयोगी है। भगवान् श्रीकृष्ण ने राष्ट्र के हित में व्यापक चिन्तन उपदिष्ट किया है। एक युवा राजा अर्जुन को राष्ट्र चिन्तन के सम्बन्ध में प्रमुख यजमान बनाकर राष्ट्र के विकास के लिए, मानवमात्र की सुख–शान्ति और कल्याण के लिए जिन सिद्धान्तों की विवेचना की है, लोकहितचिन्तन के परिप्रेक्ष्य में आज पुनः उसकी समीक्षा किया जाना विचारकों और समीक्षकों का परमकर्त्तव्य बन जाता है। सर्वप्रथम लोकहितचिन्तन और राष्ट्रचिन्तन शब्दों पर थोड़ा सा विचार कर लेना चाहिए। 'लोक' शब्द शब्दकोशों के अन्तर्गत विविध अर्थों में बताया गया है। अमरकोशकार ने 'लोक' शब्द का विवेचन करते हुए कहा है– **लोकोऽयं भारतं वर्षम्। अथो जगती लोको विष्टपं भुवनं जगत्। उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्। वर्षं तद्भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः।। आकाशे त्रिदिवे नाकः लोकस्तु भुवने जने।** महाकवि भारवि ने कहा – **वर्षं स्थानं विदुः प्राज्ञाः इमं लोकं च भारतम्।** अर्थात् 'लोक' शब्द भारतवर्ष, विश्व, भुवन तथा जन आदि अनेक अर्थों में प्रयोग में आता है। भगवान् श्रीकृष्ण ने भगदवद्गीता में कुल 36 बार 'लोक' शब्द का कथन किया है। इस

प्रकार यह 'लोक' शब्द प्रस्तुत प्रसंग में प्रमुखतः भारत राष्ट्र के सन्दर्भ में ग्रहण करना युक्तियुक्त और समीचीन है। अतः लाकचिन्तन और राष्ट्रचिन्तन इन दोनों शब्दो में अभेद मानते हुए यदि विचार किया जाये तो इसे सर्वथा संगत मानना उचित होगा। भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा प्रस्तुत लोकहितचिन्तन के कतिपय बिन्दुओं पर सम्प्रति किया जाना प्रासंगिक होगा–

1. राष्ट्रहित में विद्वानों की भूमिका।
2. राष्ट्र के सभी मनुष्यों में एकता और अखण्डता की भावना।
3. राष्ट्र में स्त्रियों, पिछड़े तथा अन्त्यज मनुष्यों की दशा सुधार पर विचार।
4. राष्ट्र में फैले हुए आतंकवाद का विनाश।
5. राष्ट्र की उन्नति में युवाओं की भूमिका।

कृष्ण के लोक चिन्तन में राष्ट्र के कल्याण हेतु सर्वप्रथम विद्वानों की भूमिका पर चिन्तन किया जाना चाहिए। राष्ट्र के हित में विद्वानों के द्वारा किये गये चिन्तन का महत्त्व सर्वश्रेष्ठ है। न केवल चिन्तन, अपितु उस चिन्तन के अनुसार विद्वानों के श्रेष्ठ आचरण की महनीयता और भी अधिक बढ़ जाती है क्योंकि श्रेष्ठ व्यक्तियों के विचारों से तथा विचारानुकूल उनके आचरणों से पूरा राष्ट्र शिक्षा ग्रहण करता है। श्रेष्ठ लोक अनुकरणीय होते है। उनके द्वारा किये गये आचरण, लोकव्यवहार, उनकी जीवनशैली उनकी कथनी और करनी राष्ट्र के सामान्य प्राणियों के लिए प्रमाणभूत है। अर्थात् उनके आचरण को शास्त्रसम्मत आचरण माना जाता है। शास्त्रों का अध्ययन और बोध करना सामान्यतः जिन मनुष्यों के लिए दुर्बोध है वे समस्त लोग श्रेष्ठ पुरुषों के आचरण को ही अपने साथ जोड़ते है, भगवद्गीता के एक स्थान पर यह देखने को मिला–

यद्यदाचरित श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते।[1]

सभी मनुष्य विद्वानों के पारिवावरिक, सामाजिक व्यवहार के साथ–साथ उनके चारित्रिक, धार्मिक और दार्शनिक आदि आचरणों पर न केवल दृष्टि डालते है। बल्कि उसे ही अपनी जीवनचर्या में उतारने की चेष्टा भी करते हैं। इस प्रकार राष्ट्र के उत्थान में विद्वानों और श्रेष्ठ जनों की विशेष भूमिका योगेश्वर श्रीकृष्ण ने उपदिष्ट की है। ऐसे अनेक श्लोक भगवद्गीता में स्थान–स्थान पर राष्ट्रचिन्तन का पाठ पढ़ाते हैं। इन महापुरुषों का यह कर्त्तव्य है कि अपने चिन्तन और आचरण्रा के द्वारा लोक को सुनिश्चित करते हए उन्हें राष्ट्रहित में उनके कर्त्तव्यपालन के लिए सतत प्रेरणा प्रदान करते रहें। अतः यह श्रेष्ठ लोगों का परम कर्त्तव्य है कि राष्ट्र की उन्नति के लिए लोगों को उनके कर्त्तव्य के प्रति जागरूक करते रहें–

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंन्निाम्।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन्।।[2]

इस प्रसंग में यह आशंका स्वाभाविक रूप से उठती है कि क्या सामान्य मनुष्यों को श्रेष्ठ लोगों के द्वारा शास्त्रीय शिक्षा से वंचित रखा जाना चाहिए? उचित और अनुचित का विवेक नहीं कराया जाना चाहिए? कर्त्तव्यपालन में अनाचार, दुराचार, भ्रष्टाचार, व्यभिचार और सदाचार आदि सिद्धान्तों के विवेचन से दूर रखना चाहिए? भगवान् श्रीकृष्ण इन आशंकाओं के समुचित उत्तर के लिए विद्वानों और श्रेष्ठ लोगों का उत्तरदायित्व सुनिश्चित करते हैं। योगेश्वर कृष्ण का यह मानना है कि राष्ट्र के उत्थान में सामान्य प्राणियों को सुशिक्षित करना विद्वानों का कर्त्तव्य है। बुद्धि और विवेक, विचार करने की उत्कृष्ट क्षमता आदि के न होने पर भी शास्त्रों का निचोड़ समझाने के लिए विद्वानों का कर्त्तव्य और अधिक बढ़ जाता है। लोककल्याण की भावना से कर्म करना और उस कर्म को लोक कल्याण में ही लगाना यह श्रेष्ठ व्यक्तियों का राष्ट्रहित में परम कर्त्तव्य है–

[1] भगवद्गीता, 3/21
[2] भगवद्गीता, 3/26

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसों यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथाऽसक्तश्चितकीर्षुर्लोकसङ् ग्रहम।।[3]

राष्ट्रकल्याण के लिए कर्म करना और जन सामान्य को उसके प्रति प्रेरित करना ही श्रेष्ठ लोगों का कर्त्तव्य है। यही सन्देश उपनिषद् वाङ्मय के द्वारा भी दिया गया है। ईशावास्योपनिषद् के द्वितीय मन्त्र मे कर्मों को करते हुए सौ वर्ष जीने की इच्छा का उपदेश प्राप्त होता है। विद्वानों का मानना है कि इस मन्त्र में 'कुर्वन' इस क्रियापद के द्वारा लोककल्याण के कार्यों को करने की प्रेरणा प्रदान की गयी है। 'कृ' धातु का परस्मैपद का रूप इस बात का संकेत करता है कि दूसरों के कल्याण के लिए कर्मों को करना और लोककल्याण के लिए सौ वर्ष जीना ही उपनिषदों का भी मन्तव्य रहा है। ईशोपनिषद् के इस वाक्य में यदि परस्मैपद की इस क्रिया का अभिप्राय ग्रहण नहीं किया जाता तो इस उपदेश की अनर्थकता सिद्ध होती है; क्योंकि यावज्जीवन कर्म करना तो जीवन की विवशता ही हैं। अतः भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा उपदिष्ट विद्वानों और श्रेष्ठ व्यक्तियों के इस उल्लेख को राष्ट्र के नाम सन्देश समझना चाहिए।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्येते नरे।।[4]

लोकचिन्तन के परिप्रेक्ष्य में योगेश्वर श्रीकृश्ण का द्वितीय महत्वपूर्ण चिन्तन है– राष्ट्र के लोगों में एकता की भावना। गुण और कर्म के आधार पर बनायी गयी वर्णाश्रम व्यवस्था इस दिशा में एक महनीय चिन्तन है। स्वधर्म का पालन कर्मयोग का मूलमन्त्र है। कर्मयोग के इस मार्ग पर चलते हुए मनुष्यों के द्वारा परमपुरूषार्थ की प्राप्ति करने की व्यवस्था भगवद्गीता का सिद्धान्त है। भगवान् श्रीकृष्ण ने गुण और कर्म के आधार पर वर्णव्यवस्था की रचना की–

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम्।।[5]

भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा स्त्रियों, शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए मनुष्यों और पशुवत जीवन व्यतीत करने वाले मनुष्यों के लिए बहुत बड़ी वैचारिक क्रान्ति उपदिष्ट की गयी है। लोकचिन्तन के क्षेत्र में यह अद्वितीय हैं। प्रायः समाज में पढ़े–लिखे लोगों की दृष्टि में उपर्युक्त तीनों वर्गो को उपेक्षा, हेय तथा अनादर की दृष्टि से देखा जाता रहा है। भगवान् श्रीकृष्ण का यह चिन्तन भक्तिसिद्धान्त के प्रतिपादन के द्वारा एक सामाजिक और वैचारिक क्रान्ति उपस्थित कर देता है। जहाँ समाज के कतिपय अभिजात लोगों के द्वारा स्त्रियों, वैश्यों और शूद्रों के मानवजीवन के परम पुरुषार्थ से वंचित किया गया है, वहीं योगेश्वर कृष्ण ने भगवद्गीता का भक्तिमय उपदेश करके इन तीनों को अंगीकार किया है–

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियों वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्।।[6]

भगवद्भक्ति व अमोघ साधन है जिसके द्वारा बड़े से बड़ा दुराचारी भी सदाचरण करने लगता है। महर्षि वाल्मीकि जैसे अनेक दृष्टान्त भारतीय साहित्य में भरे पड़े हैं। जिन्होंने भगवद्भजन के द्वारा परम साधु की पदवी को धारण किया है।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।[7]

---

[3] भगवद्गीता, 3/25
[4] ईशवास्योपनिषद् का द्वितीय मंत्र
[5] भगवद्गीता 4/13
[6] भगवद्गीता, 9/32
[7] भगवद्गीता, 14/11

राष्ट्र के समस्त मनुष्यों को भगवान् की भक्ति करनी चाहिए भक्ति के लिए जाति, धर्म, वर्ण, देश, काल आदि का कोई भी प्रतिबन्ध नहीं माना गया है

आतंकवाद एक बहुत विकट समस्या राष्ट्र के समक्ष है। विश्व के इतिहास में आतंकवाद के विविध रूप पल्लवित और पुष्पित होते रहे हैं। समय–समय पर इसके अमानवीय अत्याचारों के कारण जनसामान्य आर्त्तनाद करता रहा है। योगेश्वर कृष्ण ने आतंकवाद की इस समस्या को बहुत ही वरीय क्रम में विचार का विषय बनाया है। यदि यह कहा जाय कि भगवान् श्रीकृष्ण की राष्ट्रसम्बन्धी समस्याओं में आतंकवाद की समाप्ति सर्वप्रथम है तो सर्वथा समीचीन होगा। आतंकवाद का सामना करने के लिए सदैव ईश्वर का अवतार हुआ है श्रीकृष्ण ने यह उद्घोष किया है कि जब–जब अधर्म का उत्थान होता है, आतंकवादियों के द्वारा सज्जनों को प्रताड़ित किया जाता है, तब–तब साधुओं की रक्षा तथा आतंकवादियों के विनाश एवं धर्म की स्थापना करने के लिए मैं अवतार लेता हूँ–

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम।।[8]
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।[9]

भगवान् श्रीकृष्ण की बाल लीला से ही आतंकवावद का विनाश आरम्भ होता है और यह आतंकवाद महाभारत के युद्ध के रूप में उपस्थित होता है। और यह आतंकवाद की समाप्ति के लिए बाललीला से लेकर राष्ट्रलीला तक की पूरी यात्रा भगवान् श्रीकृष्ण ने की और आतंकवाद का विनाश किया। राष्ट्र ही नहीं, विश्व के परिप्रेक्ष्य में यह विषय मानव कल्याण और लोकहित के लिए बहुत ही महत्तवपूर्ण है। भगवान् श्रीकृष्ण का यह चिन्तन रहा है कि दुर्योधन की तरह भाई भी यदि आतंकवादी ही तो उसे भाई नहीं, आतंकवादी मानकर नष्ट कर देना चाहिए। यह राजा का परम दायित्व है। ऐसा प्रतीत होता है कि आतंकवाद के विनाश के लिए ही भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कर्मयोग का उपदेश दिया। योगेश्वर कृष्ण की दृष्टि में चाचा और भाई आदि सम्बन्धों की उपाधियाँ प्रमुख नहीं है बल्कि शासक के लिए राष्ट्र का हित सर्वोपरि है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि योगेश्वर श्रीकृष्ण लोकहितचिन्तन के महानायक थे। उनके द्वारा उपदिष्ट सिद्धान्तों का वर्तमान में अध्ययन और ज्ञान कराया जाना किसी भी देश को एक समुन्नत राष्ट्र बनने की दिशा प्रदान करने में सर्वथा उपयोगी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गीता रहस्य (श्रीमद् भगवद्गीता) लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, जेड एक्स पब्लिकेशन, दिल्ली।
2. श्रीमद् भगवद्गीता, श्री मधुसूदन सरस्वतीकृत, 'गूढ़ार्थदीपिका' स्वामी श्री सनातन देव जी महाराज, चौखम्भा, संस्कृत भवन।
3. ईशावास्योपनिषद्, तारिणीश झा रामनारायणलाल विजय कुमार, कटरा रोड, इलाहाबाद।
4. श्रीमद्भगवद्गीता शांकरभाष्य, द्वितीय भाग, मोतीलाल बनारसी दास प्रकाशन, चौक वाराणसी।
5. भगवद्गीता, गोरखपुर, गीता प्रेस।
6. गीता माता, महात्मा गाँधी।

[8] भगवद्गीता, 4/7
[9] भगवद्गीता, 4/8

7. जयदयाल गोयन्दका, श्रीमद्भगवत्गीता, तत्त्व विवेचना हिन्दी टीका सहित, गोरखपुर, गीता प्रेस।

8. सितांसु चक्रवर्ती, मेसेज ऑफ द गीता, कोलकत्ता, बनर्जी प्रकाशन।

9. स्वामी चिन्दानन्द, गीता तत्त्व दर्शन, टिहरी गढ़वाल दिव्य जीवन संघ प्रकाशन।

10. डा0 राधाकृष्णन्, सर्वपल्ली श्रीमद्भगवद्गीता, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स।

11. गीता दर्शन, रत्नाकर।

12. श्रीमद्भगवद्गीता में भक्तियोग दर्शन, डॉ0 इन्द्र मोहन प्रसाद।

13. श्रीमद्भगवद्गीता का रामानुज भाष्य, गोरखपुर, गीता प्रेस।

14. श्रीमद्भगवद्गीता, श्री मंगलदेव शास्त्री।